© 2015 IJSRSET | Volume 1 | Issue 3 | Print ISSN : 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
International Journal of Scientific Research in Science, Engineering and Technology

आदिकालीन हिंदी भाषा की ध्वनि संरचना

डॉ शशी सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर हिंदी विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश

संप्रेषण के स्तर पर भाषा की लघुतम इकाई वाक्य है। यदि वाक्य के संप्रेष्य (अर्थ) को छोड़कर रचना की दृष्टि से इसका विश्लेषण किया जाए तो जो तत्त्व प्राप्त होते हैं, वे रूप (या पद), शब्द तथा ध्वनि हैं। इस बात को स्पष्ट करने के लिए कोई वाक्य लिया जा सकता है। उदाहरणार्थ एक वाक्य है:- राजीव ने श्याम को मारा।

प्रस्तुत वाक्य को खण्डित करने पर हमें 'राजीव ने' 'श्याम को' तथा 'मारा' तीन इकाइयाँ प्राप्त होती हैं। ये इकाइयाँ पद हैं। पदों में दो तत्त्व होते हैं - संबंध तत्त्व (जो शब्दों को आपस में सम्बद्ध करे या जोड़े) तथा अर्थ तत्त्व (हर सार्थक शब्द जो अर्थ होता है, वही अर्थतत्त्व है)। उक्त पदों में 'ने', 'को' तथा ('मारा' का) 'आ' संबंध तत्त्व हैं और 'राजीव', श्याम तथा 'मार' अर्थतत्त्व हैं। इन अर्थतत्त्वों या शब्दों का पुनर्विभाजन करने पर 'र्, आ, ज्, ई, व्, अ, न्, ए, श्, य्, आ, म्, अ, क्, ओ, म्, आ, र् तथा आ' ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं। निष्कर्षतः वाक्य के खंड करने पर हमें पद या रूप मिलते हैं और रूप या पद के टुकड़े करने पर 'ने', 'को', 'आ' जैसी व्याकरणिक इकाइयाँ या संबंध तत्त्व और 'राजीव', 'श्याम' तथा 'मार' शब्द मिलते हैं। शब्दों को विभाजित करने पर ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं। इस प्रकार वाक्य का विभाजन करने पर पद, शब्द तथा ध्वनि ये तीन भाषिक इकाइयाँ हमारे सामने आती हैं। किंतु, जहाँ तक संप्रेषण का प्रश्न है, वह वाक्य के द्वारा ही संभव है। वाक्य के संप्रेष्य का ही दूसरा नाम अर्थ है। इस प्रकार कुल मिलाकर पाँच भाषिक इकाइयाँ होती हैं - 1. ध्वनि, 2. शब्द, 3. पद या रूप, 4. वाक्य, 5. अर्थ।

प्रस्तुत शोध लेख में आदिकालीन वाक्य-रचना को ठीक रूप से समझने के लिए यहाँ उक्त वाक्येतर भाषिक अंगों पर आदिकालीन हिंदी के संदर्भ में ध्वनि स्तर पर संक्षिप्त रूप से विचार किया जा रहा है।

प्रस्तावना

(I) ध्वनि - मानव के मुख-विवर से प्रवाहित वायु में वागिन्द्रिय के द्वारा जो स्फोट होता है, उसे ध्वनि कहा जाता है। इनमें से जो ध्वनियाँ भाषा में प्रयुक्त होती हैं, वे भाषा ध्वनियाँ कहलाती हैं, जिन्हें संक्षेप के कारण सामान्य प्रयोग में ध्वनि ही कह दिया जाता है। संरचना के स्तर पर भाषा की लघुतम इकाई ध्वनि ही होती है।

(क) आदिकालीन हिंदी की ध्वनियाँ -

स्वर ध्वनियाँ - आदिकाल में स्वर ध्वनियों के तीन रूप प्राप्त होते हैं -

ह्स्व स्वर - अ, इ, उ। दीर्घ स्वर - आ, ई, ऊ, ए, ओ। संयुक्त स्वर - ऐ (अ+इ), औ (अ+उ)।

आदिकालीन हिंदी स्वर ध्वनियों की यदि संस्कृत की स्तर ध्वनियों से तुलना की जाए तो निम्नलिखित अंतर दिखाई देते हैं -

[1]. संस्कृत में 'ऐ', 'औ' दोनों ध्वनियाँ क्रमशः 'आइ' और 'आउ' रूप में उच्चरित की जाती थी, जबकि आदिकालीन हिंदी में ये क्रमशः 'अइ' तथा 'अउ' रूप में बोली जाती थीं।

[2]. 'ऋ' ध्वनि प्राचीन काल में स्वर थी, परंतु आदिकालीन हिंदी में इसका उच्चारण 'रि' के समान होता था। जैसे - 'ऋतु' का रितु, 'ऋतुराज' का 'रितुराज' तथा 'ऋषि' का 'रिषि' आदि। आधुनिक हिंदी में भी इसका प्रयोग इसी रूप में होता है।

[3]. आदिकालीन हिंदी की स्वर ध्वनियों की आधुनिक हिंदी की स्वर ध्वनियों से तुलना करने पर दो मुख्य परिवर्तन मिलते हैं

[4]. अंग्रेजी के प्रभाव के कारण आधुनिक हिंदी में एक नई स्वर ध्वनि 'ऑ' (कॉलिज, ऑफ़िस) का प्रयोग होने लगा है, जबकि आदिकालीन हिंदी में यह ध्वनि नहीं थी।

[5]. आदिकालीन हिंदी में 'ऐ', 'औ' संयुक्त स्वर थे, जबकि आधुनिक हिंदी में ये मूल स्वर के रूप में विकसित हो गए हैं।

स्वर-संयोग - ''जब दो या अधिक स्वर मिलकर एक हो जाते हैं, तो उस मिलन से बने स्वर को संयुक्त स्वर कहते हैं, किंतु जब दो या अधिक स्वर पास-पास (बीच में बिना किसी व्यंजन के य, व - श्रुति अपवाद हैं) आते हैं, तो उसे स्वर-संयोग या स्वरानुक्रम कहते हैं।'' संस्कृत में सामान्यतः दो स्वर पास-पास नहीं आते थे। वहाँ जब भी दो स्वर पास-पास आते थे, उनमें संधि हो जाती थी तथा वे दोनों एक ही स्वर में परिणित हो जाते थे। इसके विपरीत पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश में व्यंजन लोप की प्रवृत्ति के कारण अनेक स्वर-संयोगों का प्रयोग हुआ है। अपभ्रंश की परंपरा से आदिकालीन हिंदी को भी अनेक स्वर-संयोग प्राप्त हुए।

उदाहरणार्थ - अअ, अआ, आऊ, अइ, अई, अउ, अऊ, अए, अओ, आइ, आई, आउ, आऊ, आए, आओ, उअ, उआ, एअ, एइ, एई, एउ, एऊ, ओआ, ओइ, ओई, ओउ, ओऊ, ओए आदि। इतना ही नहीं, इसमें तीन तथा चार स्वरों के संयोग भी मिलते हैं। जैसे - अइए, अइऐ, अईआ, अएउ, अउइआ (गउरिका) आदि।

त्र. **व्यंजन ध्वनियाँ**

कण्ठोष्ठ्य - क्, ख्, ग्, घ्, ङ्। तालव्य - च्, छ्, ज्, झ्, ञ्।

मूर्धन्य - ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण्, ड़्, ढ़्। दन्त्य - त्, थ्, द्, ध्, न् (ँ)।

ओष्ठ्य - प्, फ्, ब्, भ्, म्। अन्तस्थ - य्, र्, ल्, व्।

उष्म - स् {श्}, {ष्}। प्राणध्वनि - ह्। अनुस्वार - (÷)

संयुक्त व्यंजन - क्ष, त्र, ज्ञ, त्त।

आदिकालीन हिंदी व्यंजन ध्वनियों की यदि आधुनिक हिंदी व्यंजन ध्वनियों से उच्चारण की दृष्टि से तुलना करें तो निम्नलिखित अंतर मिलते हैं –

(1) आदिकालीन हिंदी में तालव्य 'श' उच्चारण (परिणामतः लेखन) की दृष्टि से वर्त्सय 'स' में परिणित हो गया है। उदाहरणतः- देस, सिला, साहि, सबदु, नरेस, सास्त्र, रासि, आसा, सेत (श्वेत), सगुन (शकुन), केस (केश) आदि। अपवादतः 'श्' (शिखरवासिनी) का जहाँ कहीं प्रयोग हुआ है, हो सकता है वह मूल पाठ के अनुकर्त्ता की भूल हो, जबकि आधुनिक हिंदी में इनकी अलग सत्ता है।

(2) संस्कृत का मूर्धन्य 'ष' आधुनिक हिंदी में तालव्य 'श' के रूप में विकसित हो गया है। आदिकालीन हिंदी में भी यह मूर्धन्य नहीं है। वहाँ इसके दो उच्चारण प्रचलित थे - 'श्' के रूप में - हरषियउ (हर्षित), हर्षु (हर्षित), पुरिषु (पुरुष), भाष (भाषा) आदि। 'ख्' के रूप में - षित्री (खत्री), सुषा (सूखा), रषावा (रखावा-रखवाली), षंडा (खंड), लिषि (लिखि), सेष (शेख), मुष (मुख) आदि।

कोष्ठक में दिए गए 'श्' तथा 'ष्' व्यंजनों का प्रयोग भी अपभ्रंश में हुआ है, किंतु जहाँ भी ये आए हैं, इनका उच्चारण क्रमशः 'स्' तथा 'ख्' है।

(3) न्ह, म्ह, ल्ह ध्वनियाँ पहले संयुक्त व्यंजन थीं, किंतु आदिकालीन हिंदी में ये क्रमशः न, म, ल के महाप्राण के रूप में प्रचलित हो गई, अर्थात् संयुक्त व्यंजन न रहकर मूल व्यंजन हो गए। आधुनिक हिंदी में भी ये मूल व्यंजन ही हैं।

(4) आधुनिक हिंदी में उच्चारण व लेखन दोनों ही दृष्टियों से संयुक्त व्यंजन 'क्ष' का रूप स्थिर है। यह 'क्ष' रूप में लिखा जाता है तथा 'क्ष' रूप में उच्चरित होता है। आदिकालीन हिंदी में इसके तीन रूप मिलते हैं -

क्ष - रक्षते।

क्ष - अक्षर (अक्षर), रष्षन (रक्षा)।

च्छ - विच्छोहि (विक्षोभ), छीर (क्षीर)।

(5) आदिकालीन हिंदी में 'त्र' ध्वनि के दो रूप मिलते हैं -

त्र - पुत्रिहिं (पुत्रियों), मंत्री, अस्त्री।

तर - तिरि (स्त्री), मंतरी (मंत्री), खतरी (खत्री)।

आधुनिक हिंदी में यह ध्वनि केवल 'त्र' रूप में ही प्रयुक्त हुई है।

(6) आदिकालीन हिंदी में 'ज्ञ' ध्वनि उच्चारण व लेखन की दृष्टि से 'ग्य' रूप में ही प्रयुक्त हुई है। जैसे - विग्यान (विज्ञान), ग्यायते (ज्ञात), सरवग्गि (सर्वज्ञ)। आधुनिक हिंदी में यह 'ज्ञ' रूप में ही प्रयुक्त हुई है।

(7) आदिकालीन हिंदी में फ़ारसी के प्रचार से कुछ शिक्षित लोगों में अरबी, फ़ारसी, तुर्की शब्दों के माध्यम से क़, ख़, ग़, ज़, फ़ ये पाँच नई ध्वनियाँ आ गई थीं। सामान्य लोगों की भाषा में इनका उच्चारण क, ख, ग, ज, फ ही था। आधुनिक हिंदी में भी यही स्थिति है।

(ख) लिखित रूप में ध्वनि संबंधी परिवर्तन - ध्वनि-परिवर्तन से आशय है किसी ध्वनि का बदलकर कुछ से कुछ हो जाना। जैसे - 'दधि' से 'दही' बनने में 'ध' परिवर्तित होकर 'ह' हो गया है। आदिकालीन-हिंदी में हुए ध्वनि-परिवर्तन को मुख्यतः निम्नांकित वर्गों में रखा जा सकता है:-

1. **<u>दीर्घीकरण</u>** - आदिकालीन हिंदी में छंद व लय की सुविधा के लिए कुछ स्वर दीर्घ कर दिए गए हैं। उदाहरणात:-

सप्त → सात, अंतर → आंतरु, अष्ट → आठ, सुनि → सुनी, के → कै, अउ → औ

2. **ह्स्वीकरण** - इसमें दीर्घ स्वर, ह्स्व स्वर में परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण के लिए -

घरराई → घरराइ, आनंद → अनंद, लेई → लेइ, आहार → अहार, कीओ → कीउ, औतरे → उतरे

3. **लोप** - लोप से अभिप्राय है, जो ध्वनि शब्द में पहले से हो, उसका लुप्त हो जाना। जैसे - 'सप्त' से 'सात' बनने में 'प्' व्यंजन का लोप हो गया है। आदिकालीन हिंदी में लोप कई प्रकार का मिलता है:-

(अ) स्वर-लोप -

(i) आदि-स्वर-लोप - आभ्यंतर → भीतर, जिह → जह, अति → ति,

(ii) मध्य-स्वर-लोप - समुद → समद, मानिक → मानक, कुसुम → कुसम, सरोवर → सरवर, जइस → जस, सिखिंतु → सिखंतु, चालि → चाल

(iii) अंत्य-स्वर-लोप - चुहचुहाहिं → चुहचुहाहि, कुहकुहाहिं → कुहकुहाहि, पाछें → पाढे, गिरि → गिर, गाउं → गाउ, उघरे → उघर

(आ) व्यंजन-लोप -

(i) आदि-व्यंजन-लोप - स्मशान → मसांण, स्थान → थान, तुच्छ → उच्च, युध → उध, विचित्र → चित्र, थ्थूल → थूल, सकूसर → कोसर

(ii) मध्य-व्यंजन-लोप - व्यवसाय → बउसाऊ, सुध्धि → सुधि, फाल्गुन → फागुन, धानुष्क → धानुक, बेवहरि → बेवरि, अवतार → अतार, गोपित → गोइत, स्वजन → सजन, अर्नदारत → अरदास, गहन → गन

(iii) अंत्य-व्यंजन-लोप - सूर्य → सूरू, दइय → दइ, मित्र → मीत, नेत्र → नेत, पुण्य → पुन, मनुष्य → मनुस, भूमि → भुइ

(इ) स्वर-व्यंजन-लोप - बिचित्र → चित्र, दुनिया → दुनी, ज्योतिषी → जोसी

4. **आगम** - 'आगम' से अभिप्राय है, किसी ऐसी ध्वनि का आ जाना जो पहले से शब्द में न हो। उदाहरणत:- 'सूर्य' से 'सूरज' में 'र' के बाद 'अ' का आगम हो गया है। नीचे आदिकालीन हिंदी से ध्वनि-आगम के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं:-

(अ) स्वरागम -

(i) आदि स्वरागम - स्नान → अस्नान, स्त्री → अस्त्री, स्तुति → अस्तुति, स्थान → अस्थान्, सवार → असवारा, स्थूल → अस्थूल

(ii) मध्य-स्वरागम - दीर्घ → दीरघ, दुर्ग → दुरग्ग, मूर्ख → मूरिख, धर्म → धरम, मार्ग → मारगि, अर्थ → अरथ, कार्य → कारज, वर्ष → बरस, अधर्मी → अधरमी

(iii) अंत्य-स्वरागम - घर → घरू, बार → बारू

(आ) व्यंजनागम -

(i) आदि-व्यंजनागम - उल्लास → हुलासा, एक → येक

(ii) मध्य-व्यंजनागम - संसार → संयसारू, भूगोल → भुबगोल, कैलाश → कबिलास्

(iii) अंत्य-व्यंजनागम - स्त्री → स्त्रीय, अति → अतिय, कल → काल्ह, गाल → गाल्ह, बार → बारक

(इ) स्वर-व्यंजनागम - स्त्री → तिरिया, अपार → अपरिसु

5. **विपर्यय** - विपर्यय से आशय है किसी शब्द में दो ध्वनियों का एक दूसरे के स्थान पर चले जाना। जैसे - 'ब्राह्मण' का 'बाम्हन' में 'हू' और 'म' में विपर्यय हो गया है। आदिकालीन हिंदी में अनेक वर्णों का विपर्यय मिलता है। उदाहरणार्थ - हर्षित → रहसत, तुम्ह → तुह्म, तुम्हरे → तुह्मरे, पतरि (पत्री) → परति, वाराणसी → वाणारसी, गंगा → गांग, समतूला → सतमूला (समतुल्य) , बररूचि → बरूरचि, होइह → होइहै

6. **समीकरण** - किसी शब्द में दो पास-पास की असमान ध्वनियों का समान हो जाना ही समीकरण कहलाता है। आदिकालीन हिंदी से कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं:-

अपूर्व → अप्पुब्ब, दुर्लभ → दुल्लभ, मार्ग → मग्ग, कार्य → कज्ज, सूर्य → सुरूज, अग्नि → अग्ग, सर्व → सब्ब, आप → अप्प

7. **विषमीकरण** - यह समीकरण का उल्टा है। इसमें दो एक-सी ध्वनियों में, एक ध्वनि किसी समान ध्वनि के प्रभाव से अपना स्वरूप छोड़कर दूसरी बन जाती है। उदाहरणत:-

(अ) 'ख' के स्थान पर 'ष' - खड्ग → षरगु, लिखि → लिषि, देख → देषि

(आ) 'व' के स्थान पर 'ब' - वैरिन → बैरिन, विमोहि → बिमोहि, वन → बन, विनती → बिनती, वर्ष → बरिसि, वचन → बअण, विवाह → बिबाहु, अपूर्व → अपुरूब

(इ) 'र' के स्थान पर 'ल' - घोरा → घोला, सम्बर → सम्बल, सरिता → सलिता

(ई) 'ल' के स्थान पर 'र' - बिजली → बिजुरी, मंगलाचार → मंगराचार, उजियाला → उजियारा

(उ) 'य' के स्थान पर 'ज' - कलियुग → कलिजुग्ग, यज्ञ → जग्गु, योवन → जोबन, यम → जम

(ऊ) 'ज' के स्थान पर 'य' - जोति → योति, जुगल → युगल, जो → यों, जु → यु

(ए) 'ण' के स्थान पर 'न' - गणित → गनित, आभरण → अभरन्, रणपति → रनपति, किरण → किरनि, क्षण → खिन

(ऐ) 'ड़' के स्थन पर 'र' - चड़ाई → चुराइ, दौड़ाया → दउराएहु, चड़ि → चरि, झगड़ा → झगर, अखाड़े → अखारें, घोड़ा → घोरा, गारूड़ि → गारूरि, घोड़े → घोरे

(ओ) 'द' के स्थान पर 'ड' - भुजदंड → भुवाडंड, दृष्टि → डीठि

(औ) अन्य - 'क' का 'ह' में परिवर्तन - चिकुर → चिहुर, 'ज' का 'ग' में परिवर्तन - कनवज → कनवग, 'अ' का 'र' में परिवर्तन - भट → भर

8. **उष्मीकरण** - इसमें 'श' तथा 'ष' ध्वनि उष्म 'स' में परिवर्तित हो जाती हैं। आदिकाल में यह प्रवृत्ति अत्यधिक मिलती है। उदाहरणार्थ -

आशीश → असीस, शुक्र → सुकु, शरीर → सरीर, शीतल → सीतर, शीश → सीस, कुशल → कुसर, निराश → निरास, श्रृंगार → सिंगारू, विष → विसु, आषाढ़ → असाढ़

9. **घोषीकरण** - किसी अघोष ध्वनि का दोष ध्वनि में परिवर्तन घोषीकरण कहलाता है। जैसे -

बासुकि → बासुगि, कौतुक् → कौतिगु, चातक् → चातग, अनेक → अनेग, अकास → अगासूं, नाकपुर → नागप्पुर, रक्त → रगत, खसइ → घसि, चकित → जकि, उझकत → ऊझकन, कृपान → कमान, पपीहा → बबिहा

10. **अघोषीकरण** - घोष ध्वनि का अघोष ध्वनि में परिवर्तन ही अघोषीकरण कहलाता है। उदाहरणार्थ- संग → संक, बैठि → पैठि

11. **महाप्राणीकरण** - अल्पप्राण व्यंजन के महाप्राण व्यंजन के परिवर्तित होने को महाप्राणीकरण कहते हैं। उदाहरण के लिए - शुष्क → सूखा, पतिंगा → फतिंगा, हस्त → हाथ, पुष्पाजंलि → पुप्फाजंलि, पुस्तक → पोथि, पटना → पठना, स्तंभ → थंभशनिचर → सनीछरू, मृग → मिरिघ, निरावलंब → निरालंभ, सब → सभ, पुनि → फुनि

12. **अल्पप्राणीकरण** - महाप्राण व्यंजन का अल्पप्राण हो जाना, अल्पप्राणीकरण कहलाता है। जैसे - कुसंभी → कुंसबी, खुतबा → कुतबा, अंतरिख → अंतरिक, अभिचार (मंत्र-पाठ आदि) → अबिचार, शपथ → सपत, जांघि → जांगि, झूठ → झूट

13. **स्वर मध्यग 'य' श्रुति का प्रयोग** - सागर → सायर, नगर → नयर, नगरी → नयरि

संदर्भ

1. डा. भोलानाथ तिवारी - हिन्दी भाषा, पृ. 401.

शब्द कूंची

ध्वनि संरचना, स्वर ध्वनियाँ, व्यंजन ध्वनियाँ, ध्वनि संबधी परिवर्तन

संदर्भ ग्रंथ सूची

[1]. डॉ. भोलानाथ तिवारी -हिन्दी भाषा किताब महल, इलाहाबाद, 1966.

[2]. डॉ. भोलानाथ तिवारी - भाषा विज्ञान

[3]. डॉ. भोलानाथ तिवारी - हिन्दी भाषा की संरचना, वाणी प्रकाशन, 1979.

[4]. डॉ. उदयनारायण तिवारी - हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास, संवत् 2026.

[5]. चंद बरदाई - पृथ्वीराज रासउ, साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी), संवत् 2020.

[6]. डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्थवाल - गोरख वाणी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1979.

[7]. कामता प्रसाद गुरु - नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

[8]. रामचंद्र वर्मा - अच्छी हिन्दी, लोकभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1967.

[9]. दाऊद कृत चांदायन संपादक - डा. माताप्रसाद गुप्त, 1967.

[10]. संपादक हजारी प्रसाद द्विवेदी - रामानंद की हिन्दी रचनाएँ, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस, संवत् 2012.

[11]. राउलबोल और उसकी भाषा - संपादक माताप्रसाद गुप्त, इलाहाबाद।